इकलौती संतान और विकास की अवधारणा

¼ikphu ,o orZeku ifjos'k dk lnHkZ esa ,d v/;;u½

✧ डॉ. सन्ध्या प्रसाद

मातृत्व स्त्री की सम्पूर्णता है। माता–पिता एक स्वस्थ बालक की कामना करते हैं, दोनों के कल्पना लोक में एक नन्हा सा शिशु किलकारी मारता, मुस्कराता लुभाता दिखाई पड़ता है। भविष्य पुलकित हो उठता है। लेकिन जब बालक यथार्थ रूप में सामने आता है तो उससे जुड़ी अनेकानेक समस्यायें सामने आते चली जाती हैं। बालक के जन्म के साथ ही एक नई दुनिया में प्रवेश होता है। इतने सारे एहसास और बालक का लालन पालन टेढ़ी खीर नजर आती है। खास तौर पर जब माता–पिता दोनों नौकरी पर जाते हों। क्योंकि अब परिवार विघटित हो रहे हैं, पति–पत्नी के बीच झगड़ा, तनाव, तलाक, समयाभाव, पति–पत्नी का अलग–अलग स्थान पर नौकरी करना, अकेले और अलग रहना। इस परिस्थिति में क्या माता–पिता बालक के सुख की कल्पना कर स्वप्न लोक में विचरित हो सकते हैं? ''काश'' बच्चे की जिम्मेदारी वहन करने से पहले इस विषय पर और विचार कर लिया होता आज अनेक कामकाजी पढ़ी लिखी महिलाएं मॉ नहीं बनना चाहती हैं। नौकरी के साथ–साथ बच्चे का पालन कैसे कर पायेंगी। उनकी मानसिकता भी ये होती है कि बच्चा पैदा करने पर समाज उन्हें कोई सम्मान नहीं दे देगा या फिर जीवन में उन्हें ये अफसोस न रह जाये कि बच्चे की परवरिश के अलावा और कुछ नहीं कर पाई। हमारी संस्कृति पश्चिम से भिन्न है जहाँ स्त्री गृहकार्य व बच्चे की परवरिश करेगी और पुरूष बाहर आजीविका चलाने का कार्य करेंगे। धीरे–धीरे शिक्षा के बढ़ते स्तर से महिलाओं में भी अपने कैरियर तथा व्यक्तित्व के प्रति सजगता दिखायी पड़ने लगी। आजादी के बाद जीवन की हर दिशा व पहलू पर विचार किया गया भारतीय समाजविद इस मुद्दे पर अपना वक्त खर्च कर चुके हैं कि भारतीय दम्पत्तियों की कितनी संतानें होनी चाहिये। सत्तर के दशक में स्वास्थ्य विभाग के लाल तिकोने पर तीन बच्चे मुस्कराते दिखे फिर दो के बाद तीसरा नहीं, नारा चला हम दो हमारे दो अस्सी के दशक के बाद एक बालक की बात शुरू हो गई जिस पर लम्बे समय तक बहस चली और समाज किसी नतीजे पर नहीं पहुंच सका। संतान की संख्या का निर्धारण व्यक्तिगत हैं। संतान होना ही समस्या का हल नहीं है उसक सम्पूर्ण विकास व व्यक्तित्व जिसे बनाने के लिये माता–पिता का पूर्ण जीवन समर्पित हो जाता है। यही राष्ट्र के भविष्य भी हैं, जिनकी शिक्षा संस्कार के मायने हैं, देश का शिक्षित होना संस्कारवान होना। बालक वह बुनियाद है जिस पर राष्ट्र के भविष्य की इमारत खड़ी होती है। प्रायः सभी मनोवैज्ञानिकों की यह धारणा है कि व्यक्तिगत और सामाजिक अनुकूलन के लिये जीवन के कुछ प्रथम वर्ष सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं।

euksoSKkfud fodkl%Red n`f"Vdks.k

विकास के उद्देश्य की व्याख्या करते हुए स्वामी विवेकानन्द ने कहा है :– ''नैतिक बनो, वीर बनो, सम्पूर्ण हृदय वाले नैतिक तथा विकट परिस्थितियों से जूझने वाले मनुष्य बनो। धर्म तत्वों से उलझकर मानसिक कठिनाईयों में मत पड़ो। कायर ही पाप करते हैं। वीर कभी पाप नहीं करते, मन से भी नहीं। अतः विकास की प्रक्रिया का उद्देश्य बालक को वीर, संकल्पशक्तिवान, दृढ़ प्रतिज्ञ बनाना है। इसकी तैयारी बालक को नहीं अपितु उसकी माँ को करनी पड़ती है। बालक का विकास इस बात पर भी निर्भर करता है कि परिवार में उसकी स्थिति क्या है। प्रायः देखा गया है कि पहला और इकलौता बालक विशेष लाड़ प्यार से पाला जाता है सीखने की जहाँ तक बात है, छोटे बच्चे अपने बड़े भाई–बहनों से शीघ्र सीखते हैं प्रौढ़ों की तुलना में वह बालक जिनके भाई अथवा बहिन हैं उनके सर्वांगीण विकास ज्यादा संतुलित एवं व्यवस्थित होता है। स्वस्थ विकास के लिये सबसे महत्वपूर्ण बात है बच्चे को इस बात की स्वतंत्रता प्रदान करना कि वह जीवन के कुछ पक्षों पर परिस्थितियों से अनुभव कर सीखे और उन्हें महसूस करे। जो माता–पिता हर समय इस बात से परेशान रहते हैं कि बालक कोई भूल न कर बैठे या रास्ते में भटक न जाये। उसके व्यक्तित्व को उभरने नहीं देते इकलौते बालक के प्रति अतिसंरक्षण की प्रवृत्ति के चलते माता–पिता हर समय 'यह न करो, वह न करो' जेसे शब्दों के प्रयोग से बालक के हृदय में उत्पन्न आत्मविश्वास को परिपक्व नहीं होने देते।

इकलौती संतान के संबंध में यह तथ्य भी महत्वपूर्ण है कि यह माता–पिता का फैसला है या फिर किसी अन्य कारण से दूसरी संतान का जन्म नहीं हुआ संतान चाहे किसी भी कारण से अकेली हो, माता–पिता का सारा ध्यान व समय उन्हीं की चिन्ता में गुजरता है। आर्थिक दृष्टि से देखें तो इकलौती संतान की आवश्यकता, शिक्षा आदि सभी पहलुओं पर जैसा चाहे वैसा खर्च कर पाना संभव है और अधिक संतान होने पर यह हिस्सा बंट जाता है। लेकिन इकलौती संतान के जीवन की अनिश्चितता, उसे खो देने का भय, स्वास्थ्य, शिक्षा अपने से दूर होने का भय आदि सब बातें माता–पिता को उस संतान के साथ सुख से नहीं रहने देती। कभी–कभी सारे अरमानों को पूरा करने का दायित्व उस बेचारी इकलौती संतान पर आता है। फलतः माता–पिता की अपेक्षाओं को पूरा न कर पाने की कुंठा बालक के व्यक्तित्व को कुंठित कर देती है और बच्चा कई असामान्यताओं का शिकार हो जाता है।

हरलॉक नामक मनोवैज्ञानिक का मानना है कि यदि बच्चे का सुव्यवस्थित विकास करना है तो उसे सहोदर संबंधों के बीच पालना होगा। प्रायः बच्चे उसी को अपना साथी बनाते हैं जो उनके साथ अच्छी तरह खेल सकते हैं अथवा कुछ अन्य काम कर सकते हैं। प्रौढ़ व्यक्ति बहुत दिनों तक बच्चों के साथी नहीं रह सकते। इन

lgk;d izk/;kid] 'kkldh; deyk usg: dU;k egkfo|ky;] ckyk?kkV

परिस्थितियों में बच्चे के लिये उसके भाई–बहिन से बढ़कर और कोई नहीं होता। अध्ययनों में यह तथ्य भी सामने आया है कि भाई–बहिन के परिवार वाले बच्चे स्वभावतः सामाजिक व्यवस्थापन की कुछ कलायें सीख लेते हैं। क्योंकि वे प्रारंभ से ही अपने घर में कई प्रकार के स्वभाव वाले व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं। फलतः वे समूह में भी शीघ्र ही व्यवस्थित हो जाते हैं। अतः ऐसे बच्चे दूसरों की अपेक्षा अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर लेते हैं। इकलौते बच्चे को घर के सभी सदस्य अपनी हथेली पर लिये रहते हैं अतः बच्चों के समूह में वह अपने को सरलता से व्यवस्थित नहीं कर पाता क्योंकि वहाँ उसके हठ को मानने वाला कोई नहीं होता। स्पष्ट है कि इकलौते बच्चे बहुधा अपने समूह में प्रसिद्धि नहीं पाते। अतः मनोवैज्ञानिक विकासात्मक अवधारणा के अनुसार इकलौता बच्चा प्रायः जिद्दी, हठीला, प्रभुत्वतावादी व्यवहार, अपनी बात मनवाने वाला होता है और जब उसका बाहर सामाजिक वातावरण से सम्पर्क होता है तब उन परिस्थितियों में वह अपने आपको समायोजित नहीं कर पाता यही कुसमायोजन कई बार व्यक्तित्व विघटन का गंभीर कारण बन जाता है।

bdykSrh lUrku dh vo/kkj.kk

पिछले लगभग दो दशक से इकलौती संतान की अवधारणा ज्यादा दिखाई दी है। जिसके कुछ प्रमुख कारण हैं – बढ़ती भौतिकतावादी प्रवृत्ति, शानशौकत और ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने की लालसा साथ ही स्त्री का उच्च शिक्षित होकर आत्म निर्भर बनने के लिये नौकरी पेशा होना परिणामतः बच्चों के पालन पोषण के लिये पर्याप्त समय का अभाव । इसके अलावा माता–पिता के काम पर चले जाने के बाद बच्चे की देखरेख की व्यवस्था का अभाव। क्योंकि वर्तमान में संयुक्त परिवारों का विघटन हो जाने से बुजुर्गों का संरक्षण मिलना मुश्किल हो गया है। इसके अतिरिक्त बढ़ती मंहगाई और खर्चीली होती शिक्षा व्यवस्था ने माता–पिता के मन में ''हम दो हमारा एक'' की भावना को सुदृढ़ करने में अहं भूमिका निभाई है। हर स्त्री की सम्पूर्णता उसके माँ बनने में ही होती है, जिस दिन माँ बच्चे को जन्म देती है उसी दिन से माता–पिता दोनों का नया जीवन शुरू होता है यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि नवजात शिशु ही माता–पिता को नया जीवन प्रदान करता है। माँ उसे नौ माह तक अपनी कोख में पालती है इसलिये उसका एक अटूट संबंध भी माँ से ही होता है। माँ का दायित्व उसी दिन शुरू हो जाता है जब शिशु का आगमन माँ के पेट में होता है। इस विषय पर अध्ययन करने के लिये एक ही आयुवर्ग समान शैक्षिक एवं आर्थिक स्तर तथा पति–पत्नि दोनों का कामकाजी होना, एक ही तरह के एक छोटे समूह के लोगों को लिया जिनकी इकलौती संतान है, चाहे वह लड़का है या लड़की। उनसे माखिक चर्चा व उनके बच्चों के विकास, व्यवहार, पारिवारिक वातावरण, शिक्षा, रूचि, अभिभावकों के द्वारा दिया जाने वाला समय आदि सभी विषयों पर उनकी व्यक्तिगत रूचि व रूझान को जानने का प्रयास किया गया। बहुत करीब से लम्बे समय से उनके साथ बिताये समय व उनकी प्रतिदिन की दिनचर्या का अवलोकन किया गया। किसी एक तरीके से इस विषय पर केन्द्रित न रहकर उनका व्यक्तिगत इतिहास, निरीक्षण, जीवन चरित्र, शारीरिक, मानसिक विकास आदि सभी तरीकों से लालन पालन तथा उनके अभिभावकों से जानने का प्रयास किया गया। इस अध्ययन के दौरान जो तथ्य सामने आये वह हैं :–

सर्वप्रथम तो प्रायः अध्ययन समूह की हर माँ ने यह बताया कि हर मिलने वाला व्यक्ति यही सवाल करता है कि दूसरा कब आ रहा है और जब ये बाते बच्चे के सामने होती हैं तो कभी तो वह भी यही सवाल उठा देता है। प्रायः लोगों के सुझाव एवं विचार भी आने लगते हैं कि इकलौती संतान है। बहुत जिद्दी और लाड़ प्यार में बिगड़ रही है। विशेषज्ञों का मानना है कि एकमात्र संतान के महत्व को समझा जाये। बोकहार्ट हॉस्पिटल में पेरेटिंग काउंसलर और मनोवैज्ञानिक डॉ0 लता हेमचंद कहती हैं एक मात्र संतान होने पर उसका ज्यादा ध्यान रखा जा सकता है दोनों के बीच संबंध अधिक निकट होते हैं इसके अलावा बच्चों के वीच प्रतिस्पर्धा और अधिक व्यय से बचा जा सकता है। अमेरिका में हाल ही में हुए सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि एक मात्र संतान अधिक भाई–बहनों की तुलना में अधिक बुद्धिमान होती है। बैंगलोर वि0वि0 में मनोविज्ञान विभाग के रीडर डॉ0 सुधा गागंले के अनुसार एक मात्र संतान स्वतंत्र. और बेहतर निर्णय लेने में सक्षम होती है। हाल में ही चीन में एक ही बच्चे को बढ़ावा देने के लिये एक नारे की मिसाल दी गई कि ''एक से ज्यादा बच्चे का भार उठाने के लिये धरती माता अब थक चुकी है।

यह भी सत्य है कि भारतीय दम्पत्ति एक से अधिक संतानों का पालन पोषण बेहतर तरीकों से कर पाने में असमर्थ हैं। कामकाजी शिक्षित समाज अपनी इकलौती संतान को बेहतर शिक्षा व सुविधा प्रदान करता है, पर समय का अभाव तो है ही। यही सुख सुविधा का बाहुल्य संतान को आराम–तलब और भविष्य के प्रति गैर जिम्मेदार भी बना सकता है। सिगमंड फ्रायड तो इकलौती संतान को स्वयं से स्वयं को खतरा बताते हैं, मगर दूसरी तरफ यह भी माना गया है कि इकलौती संतान आत्म विश्वासी और आत्म निर्भर होती है। डार्विन का मानना है कि जब प्रतिस्पर्धा ही नहीं होगी (भाई बहनों के न रहने पर) तो सारी उर्वरता का दोहन शेषित एक ही करेगा, जो शक्तिशाली व समर्थ होगा। अध्ययन में जो बातें सामने आई उनमें यह भी दिखाई दिया कि बचचा बहुत छोटा होने पर भी छोटे–छोटे काम स्वयं करता है। काम में सहयोग की भावना दिखाई दी क्योंकि अकेला है और माँ जो भी काम करेंगी बच्चा हर वक्त उसके साथ होगा। एकाकी बालक को हमउम्र बच्चे खेलने के लिये साथ नहीं होते तो माता–पिता उसके साथ छोटे बनकर खेल में साथ देते, उसक असर माता–पिता के तनाव और काम के बोझ को कुछ समय के लिये हल्के फुल्के खुशनुमा वातावरण में ले आता है। इसके अलावा हमने जाना कि बच्चा जब हमेंशा अपनी उम्र से बड़े लोगों के साथ होता है तो वह उनकी बातों पर ध्यान देकर, उस राह पर चलने का प्रयास करता है। यह भी देखा गया कि माता–पिता इस बात का विशेष ध्यान रखते हैं कि बालक के समक्ष कौन सी बात की जाये और कौन सी नहीं। माता–पिता और अन्य व्यस्कों के साथ रहने पर हावभाव, बोलचाल, शब्दों का चयन बातचीत का तरीका, तथा विषयों का चयन

बड़ों जैसा हो जाता है, और वह समयपूर्व प्रौढ़ नजर आने लगता है। एकांकी बालक को सामान्य बालक की तरह व्यवहार की आवश्यकता है क्योंकि कभी तो हम उसे जल्दी ही बड़ा बनाकर घर की जवाबदारी सौप देते हैं और कभी हम उसे आजीवन बच्चा समझ हाथ से भोजन कराते रहते हैं। अध्ययन से संबंधित कुछ अन्य महत्वपूर्ण तथ्यों को जानने के लिये चिकित्सक, बाल चिकित्सक, बाल मनोवैज्ञानिक समाज शास्त्री तथा काउंसलर से भी इकलौते बालक के संबंध में चर्चा की गई। चर्चा से प्राप्त तथ्य निम्नानुसार हैं :–

महिला चिकित्सक–डॉ0 वन्दना इन्होंने स्वेच्छा से इस बात को स्वीकारा कि उनकी इकलौती संतान है। समय का अीााव होते हुए भी उन्होंने पूरा समय अपने बच्चे को दिया उनका कहना है कि यह जरूरी नहीं कि हम अपने बच्चे को कितना समय दे पा रहे हैं, जरूरी यह है कि हम अपने बच्चे को कितना जानते हैं मानना है कि अपने कार्य के साथ–साथ बच्चे की बेहतर परवरिश के प्रति हर पल हर क्षेत्र में सजग रहकर सर्वांगीण विकास के लिये उसे उचित वातावरण प्रदान किया। सामाजिकता के विकास के लिये समय–समय पर उसे सबसे मिलवाना बच्चों के साथ खेलने के अवसर प्रदान करना। डॉ0 वन्दना का कहना है कि उनका बच्चा स्वयं नहीं चाहता कि उसका कोई भाई–बहिन हो क्योंकि यदि होगा तो माता–पिता का प्यार बँट जायेगा एवं हर चीज का बंटवारा होगा जो वह कदापि नहीं चाहता। साथ ही इनका मानना है कि बच्चे जिनके छोटे भाई–बहिन होते हैं वह उम्र से पहले ही बड़े हो जाते हैं। समाज का दबाव भी होता है कि दूसरी संतान हो पर यह पूर्णतः व्यक्तिगत फैसला है। इनका बच्चा इकलौता होने पर उसके विकास में कोई कमी नहीं है वह एक पूर्ण विकसति स्वस्थ बच्चा है।

शिशु रोग विशेषज्ञ डॉ0 बंसल :– डॉ0 बंसल का मानना है कि इकलौता होने से फर्क तो पड़ता है वह हर कार्य अपने माता की तरह करने लगता है संयुक्त परिवार में व अन्य भाई–बहिनों के साथ रहने पर उसका विकास अच्छा होता है। यदि शिक्षित कामकाजी महिला है तो वह अपने बच्चे को पूरा समय देकर हर दिशा में उसके बेहतर विकास के लिये प्रयास करती है। परन्तु कभी–कभी अत्यधिक लाड़ प्यार के कारण उसमें जिद की भावना भी आ जाती है। आया व नौकर के साथ रहकर वह उसकी तरह कार्य व व्यवहार सीखने लगता है। मॉग पूरी न होने पर क्रोध आना स्वाभाविक होता है। उसके खो देने का भय उसके माता–पिता के अतिरिक्त उसके रिश्तेदारों को भी रहता है। इसीलिये अतिरिक्त ध्यान व चिन्ता उससे जुड़ जाती है।

बाल मनोवैज्ञानिक (श्रीमती कृष्णा शर्मा) :– के अनुसार बच्चे के संतुलित एवं उचित विकास के लिये भाई–बहिनों का होना बहुत आवश्यक हैं। अकेला बालक जिद्दी, अनियंत्रित, अपनी बात मनवाने वाला प्रभुत्ववादी दृष्टिकोण रखने वाला होता है। इकलौते बालक में समायोजन क्षमता का अभाव पाया जाता है। हर समय माता–पिता के संरक्षण में रहने वाला बालक बड़े होने पर भी अपने आपको बड़ा नहीं समझता है। इसके अलावा श्रीमती शर्मा का यह भी मानना हे कि जब माता–पिता इकलौती संतान ही चाहते हैं वहॉ उनके मन में लड़के की ही चाहत होती है यह चाहत आज हमारे सामने लैंगिक विषमता जैसी गंभीर समस्या को रखा करने में कहीं न कहीं जवाबदार हैं।

मनोवैज्ञानिक एवं काउंसलर :– डॉ0 नीता शर्मा का मानना है कि इकलौते बच्चे पर अभिभावक का दबाव अनचाहे रूप में बढ़ जाता है जिससे कभी–कभी बच्चे का व्यवहार असंतुलित हो जाता है। इकलौते बालक शुरू से बड़ों के साथ रहते हैं और छोटे बच्चों के साथ रहने के अवसर कम मिलने के कारण उनका व्यवहार बचपन से ही बड़ों के समान होने लगता है। अतिसंरक्षण, अत्यधिक लाड़ प्यार उन्हें क्रोधी ओर जिद्दी बना देता है। हर कार्य के लिये बच्चा माता–पिता पर ज्यादा निर्भर रहता है। हालांकि उनका मानना यह भी है कि वर्तमान परिस्थितियों में अब माता–पिता अपने बालक के बेहतर विकास के लिये समस्त पहलुओं को ध्यान में रखकर इकलौते बालक को हर वो वातावरण प्रदान करते हैं जो कि उनके बालक को हर परिस्थिति में समायोजित करने में सहायक हो सके। फेमिली के इतिहास को भी देखा जाये, जहॉ बच्चों में भेद होता है वहॉ पति–पत्नि विवाह के बाद से ही एक संतान की चाह करने लगते हैं। बच्चे व माता–पिता का संबंध निकट हो, हमेंशा समय पर साथ हों बातचीत करें तो बच्चे की सही जानकारी व समस्या का समाधान किया जा सकता है। इससे उसका व्यवहार संतुलित होगा तथा विकास भी निश्चित क्रम में होता रहेगा। गॉव में जहॉ बालक का लालन पालन में असुविधा होती है वहॉ इकलौती संतान नहीं होती जब तक कोई मेडिकल समस्या न हो। बल्कि शहरी क्षेत्रों में शिक्षित पति–पत्नि अपने कैरियर को ध्यान रख बार–बार बच्चे की चाह नहीं रखते। एक से अधिक बच्चे होने पर उनहें सम्भालना, उन पर व्यय करना, पालना आदि मुश्किल नजर आता है अतः एक बालक का फैसला उनका व्यक्तिगत होता है। कभी–कभी संगत का साथ न मिलने से या तो वो सुस्त रहेगा या अचानक आक्रामक भी हो सकता है। कभी–कभी अीािभावक पूरे समय उसके पीछे पड़े रहते हैं तो बच्चे का क्रोधित होना स्वाभाविक है। अतः बच्चे एक हों या अधिक व्यवहार माता–पिता का संतुलित होना आवश्यक है। समयाभाव के कारण हम बालक को टी0वी0 के समक्ष बैठा देते हैं उससे मानसिक विकास प्रभावित होता है जो बातें उम्र के विकास के साथ धीरे–धीरे होनी चाहिए वह असयम अधकचरी अवस्था में दिमाग में बैठती चली जाती है। बच्चे एक छलांग में ही बड़ों की दुनिया में पहुंच जाते हैं। वह देख सकते हैं, सुन सकते हैं पर उसे समझ नहीं सकते अभिभावकों को उसे समझाना भी सहज नहीं होता हैं कोमल बाल बुद्धि के अनुसार हर बात को स्वीकार करता जाता है।

समाजीकरण :– किम्बल वेग के अनुसर सामाजीकरण का अर्थ उस प्रक्रिया से है जहॉ व्यक्ति सामाजिक और सॉस्कृतिक संसार से परिचय प्राप्त करता है सामाजिकरण की प्रक्रिया बच्चे के जन्म के साथ ही उत्पन्न होती है। आयु बढ़ने के साथ–साथ बच्चा एक सामाजिक प्राणी बन जाता है परिवार ही इसकी मुख्य धुरी होता है। क्योंकि बालक की विकासात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति परिवार से ही होती है। जन्म से ही माता–पिता के समक्ष यह समस्या रहती है कि बच्चे का लालन पालन कैसे किया जाये कि बच्चा बड़ा होकर समाज के योग्य व उत्तरदायी

बन सके। यहाँ इस सामाजिकरण का उल्लेख आवश्यक है क्योंकि मानव समाज से अलग नहीं है। समाज में रहकर ही बालक समाज के आचार–विचार, रहन–सहन, विश्वास, अभिव1ति, रीति रिवाज आदि सीखता है। बालक पूर्व में जल्दी सामाजिक होता था, क्योंकि संयुक्त परिवार व पड़ोस, गॉव उसे हर पल अपने करीब नजर आते थे। किन्तु अब इस सामाजिकता के अभाव से बालक अच्छे संस्कारों से दूर होता जाता है। यह स्थिति परिवार में भाई–बहिनों का अभाव, माता–पिता का समयाभाव, और एकल परिवार के प्रति आकर्षण की राह से बन रही है। जन्म के समय तो बालक एक मानव पशु होता है वह ध ीरे–धीरे भाई बहनों, परिवार के अन्य सदस्यों, दोस्तों व शिक्षकों के सम्पर्क में आकर व्यवहार सीखता है। जितना उसका सामाजिक सम्पर्क होगा, उतना विकास तीव्र होगा। बालक अनुकरण से जल्दी बहुत कुद सीख पाता है अकेला होने की वजह से बड़ों का अनुकरण उसे समय पूर्व बड़ा भी बना देता है। प्रारंभ में बाल मुख से बड़ी बातें अच्छी लगती हैं, पर बाद में एक समस्या बन जाती है। भाई बहनों के अभाव में प्रतिस्पर्धा, हिस्सेदारी, त्याग आदि को वह नहीं समझ पाता सब चीजों पर एकाधिकार होता है समाजशास्त्री डॉ0 आशासिंह का मानना है कि वह अकेलापन का शिकार हो जाता है और कभी–कभी वह दूसरों के समक्ष अपने भाव, संवेग को व्यक्त नहीं कर पाता, अकेला होने से वह किसी भी चीज की जिम्मेदारी को नहीं सीख पाता, छोटा सा हिस्सा भाई–बहनों को देने से जो खुशी मिलती है उसको भी वह महसूस नहीं कर पाता। बच्चों को मनोविज्ञान का गहरा ज्ञान होता है और वह उसका उपयोग जीवन के हर स्तर पर भी करते हैं। समय–समय पर वह माता पिता को इमोशनल ब्लेकमेल भी कर अपना काम निकाल लेते है। । माता–पिता व बड़ों के साथ निरंतर रहने स उसकी हर बात व किया कलापों का सूक्ष्म अवलोकन करते हैं, जिससे वह अपने अभिभावकों की कमजोरी क्या है, उसे जानकर उसका भरपूर उपयोग भी करते हैं। अकेले होने से उनकी हर वक्त हर वस्तु के लिये स्वाभाविक मॉग बनी रहती है। ऐसा आवश्यक नहीं है कि एकाकी बालक ही इस प्रकार का हो। दूसरे बच्चों में भी यह चीज दिखायी देती है। इकलौते बालक के प्रति अपार स्नेह व उसे खो देने का भय माता–पिता को उसकी सुरक्षा के लिये अधिक चिंतित बना देता है। माता–पिता अपने सपनों को पूरा करने के लिए हर विद्या तथा प्रतियोगिता में पुरस्कार प्रापत करने का अतिरिक्त दबाव भी डालते हैं, उस अरमान को पूरा ना कर सकने से कभी–कभी वह सअपने को हीन समझने लगता है और इससे उसका आत्म विश्वास कमजोर पड़ने लगता है। इकलौते बालक पर हर पल कसता शिकंजा उसे सिर्फ मानसिक तनाव ही दे पाता है। उसकी आजादी के दिनों मे हर पल उस पर बोझ लाद दिया जाता है। बालक अकेला होता है तो उस पर अनजानी बातों का भय भी बैठ जाता है जिससे वह बहुत सारे कार्यों से दूर हो जाता है। माता–पिता नौकरी कर रहे हैं। पर्याप्त समय नहीं दे पाते। बालक मित्रों की गलत संगत से हिंसा व अपराध के रास्तों पर निकल सकता है। बालक की गलती पर बात – बात में हाथ उठाने से उस पर नियंत्रण व भय समाप्त होता जाता है। अपेक्षायें एकाकी से अधिक होने से और उसे पूरा न कर सकने से वो हीन समझने लगता है अगर बच्चा परिवार तथा अपने आयु समूह के साथ रहता है तो अन्य बच्चों के साथ जल्दी ही नई बातों को सीख लेता है।

fu"d"kZ %&उपरोक्त अध्ययन इस विचारधारा को पुष्ट करता है कि वर्तमान परिस्थितियों के मद्देनजर इकलौती संतान का पालन पोषण जितनी अच्छी तरह से कर उन्हें सुविकसित, संस्कारित एवं सुसमायोजित व्यक्तित्व प्रदान किया जा सकता है दूसरे बालक को देने में माता–पिता अपने आपको असमर्थ पाते हैं। अध्ययन समूह के लगभग सभी माता–पिता इस बात को स्वीकार करते हैं कि उनका बालक अन्य बालकों के समान ही सामान्य विकास एवं व्यवहार कर रहा है। उसके विकास अथवा व्यवहार में कोई कमी नहीं है। हर अभिभावक का यह मानना है कि कुछ बाल सुलभ व्यवहार जैसे जिद्दीपन अपनी बात मनवाने की हठ या अकेलेपन का अहसास समय के साथ धीरे–धीरे बच्चे को सामान्यता की ओर ले आता है। सभी अभिभावकों का यह मानना है कि हम एक बच्चे को जिसना समय एवं जितनी अधिक सुविधायें दे रहे है। समान रूप से दूसरे बच्चे को दे पाना संभव नहीं होगा। आज के युग की प्रगतिशील नारी अपने जीवन के महत्वपूर्ण काल को केवल बच्चों के पालन पोषण में खर्च नहीं करना चाहती है। वह जीवन के हर क्षेत्र में अपनी योग्यता का प्रदर्शन कर अपने आपको पुरूष की बराबरी पर खड़ा करने के लिये लगातार अग्रसर है। माता–पिता की सजगता, शिक्षा आदि ने एकाकी बालक के विकास की सभी प्राचीन मान्यताओं को नई दिशा प्रदान की है। कुछ ऐसे परिवारों ने भी इस विचार पर अपना मत प्रकट किया जिनके एकाकी बालक हैं और इस आयु समूह से बढ़े हैं, वो वर्तमान में उच्च शिक्षा प्राप्त कर, जिम्मेदार, संस्कारित नागरिक बन उच्च पदों पर आसीन हैं। हम यह कह सकते हैं कि एकाकी बालक ही जिद्दी या बिगड़ैल होगा ऐसा नहीं है ऐसा कोई भी बालक हो सकता है। यदि माता–पिता उसक सही मार्ग–दर्शन शिक्षा व संस्कार प्रदान नहीं करते हैं तो बालक का विकास बहुत कुछ आस–पास के लोगों के व्यवहार व वातावरण पर भी निर्भर करता है परिवार की भावी योजना, समय व विकास की मॉग के आधार पर होती है। हम इस अध्ययन से इस निर्णय पर पहुंचते हैं कि इकलौती संतान अधिक स्वतंत्र व निर्णय लेने में सक्षम है। हर दिशा में उसका विकास पूर्ण है और वह जीवन की हर दिशा में सफल है।

lUnHkZ lwph %&

1. बाल विकास तथा पारिवारिक संबंध–डॉ0 सरयूप्रसाद चौबे 2. बाल विकास तथा पारिवारिक संबंध–मथुरेश्वर पारीक 3. बाल विकास एवं बाल मनोविज्ञान–सुरेश भटनागर 4. बाल मनोविज्ञान–भाई योगेन्द्र जीत 5. बच्चे क्यों बिगड़ते हैं–जगतसिंह 6. बालक और अभिभावक–जगतसिंह 7. व्यक्तित्व का मनोविज्ञान–अरूण कुमार सिंह, आशीष कुमार सिंह 8. आधुनिक समाज मनोविज्ञान–डी0एन0 पाण्डे, जगदीश पाण्डे, रणजीतसिंह 9. दैनिक भास्कर समाचार पत्र–7 अगस्त 2007